



श्रीराजेन्द्रप्रथम-कार्यालय-मिरीज ३७



श्रीसौधर्मश्रुतपागळीय-  
अक्षयनिधितप-विधि ।

तथा

श्रीपोषध-विधि ।

अक्षय-विधि-ग्रन्थात्  
प्रकाशक-संस्था

माध्वी श्रीपूज्यश्रीजी क संदुपदेश से श्रीसौधर्म  
श्रुतपागळीय-जैन श्वेताम्बर-सध ।  
ग्याधरोद ( मालवा )

— ११५ —

|                    |                    |                |
|--------------------|--------------------|----------------|
| धीवार-वि० २४६९     | } द्वितीय-मस्करण { | विक्रम-स० १९९९ |
| राजेन्द्रमणि-स० ३५ |                    | १०००           |

मूल्य-सदुपयोग ।

मुद्रक-शारद गुरुशचद शल्लुभाई, श्री महोदय प्री-टींग प्रेस  
भायनगर

## सूचना-

पौषघ-त्रिधि में जहाँ-जहाँ पर खमाममण, या खमा०, इरियाग्रहि०, तम्म उत्तरी०, अन्नत्थ०, लोगम्म०, इच्छाकारेण०, अह्वाइजेसु०, नमुत्युण०, वदणव०, पुक्खर-वरदी०, सिद्धाण बुद्धाण० सबलोए अरिहत०, जावति०, जावत०, नमोऽर्हत्ति०, उरस्सग्गहर०, जय वीयराय०, सरुलकुशलपल्ली०, चउकमाय०, करेमि भते०, सामाइय-वयजुत्तो०, अब्भुट्ठिओइ अन्निमतर०, मात लाख०, जग-चिंतामणि०, मण्हजिणाण, आदि लिखा हो वहाँ पर पूरा-पाठ, एव गमणागमणे लिखा हो वहाँ 'इरियाममिति भासा-समिति' इत्यादि पूरा पाठ बोलना चाहिये । जिम जगह 'इरियाग्रहि' करके लिखा हो वहाँ इरियाग्रहि०, तम्म उत्तरी० अन्नत्थ०, चार नक्कार का काउस्मग्ग पार के लोगम्म० कहना समझना चाहिये ।



## प्राथमिक-वक्तव्य ।



शाचरीद-धीमघ का भावना सर्वानुमत ग साध्वीजी का स १९९९ का चामासा शाचरीद में कराने का हुइ । जाग प्राप्त करन के लिये सष के तरफ से एक डेप्युटान भूति (मारवाड) म बिराजमान प्रात स्मरणाय आचार्यदेवज धीमदू विचयदनी-दमुरीश्वरजा महाराज का सेवा म भेजा गया । हमारे भाचो-दय मे आचार्यदेवता बयस्थावरा-श्रीपू-श्रीची धामगनधीजी धीउत्मधीजी क्षार आलम्हीश्रीजा एव चार माध्वीना का शाचरीद में चामासा करने का आशापत्र दे दिया । सघन उस आशापत्र के सहित एक डेप्युटान राजगण (माया) माध्वीजी क पाग नजा । माध्वीजीने आशापत्र को देस पर शाचरीद म चीमासा करने की उद बाला दी ।

चाग माध्वीजी राजगण म विहार कर रास्त के गँवों म स्थिरता करती हुए बरहावदा पधर्षा । यहाँ आपक उपदेश स एक जैनपठशाला और एक जैनसेवानाल कायम हुआ । फिर यहा मे आब पत्रलाणा पधर्षा । यहा आपके उपदेश मे एक अष्टादशहोत्सव और स्वानिवासस्थ आदि शुभ कार्य हुए । यहाँ मे विहार करके आपका पधारना शाचरीद हुआ और वर्षावास की स्थिरता कायम हुई । ध्यानज्ञान में 'आशातार्ज सूत्र' और भावनविहार में 'सम्यकन्यकीमुदी' वाचना आरम्भ किये-जिमकी सुनन के लिय जैन-अजैन धानाओं का मझ्या अच्छा उपस्थित हाती थी । यहाँ माध्वीजी के चातुर्मास बिराजने मे पर्वणपर्व में अन्दाजन एकमो एक भाषक धानिक भोन अक्षमनिधितप का आराधन करके बड़ी धामधूम म अष्टादिक-महात्मव किये । चातुर्मास में पचरगोनव और शिद्धितप का नी आराधन भारा पुजा स हुआ । इन गनों के उत्सवों का निरीक्षण करने के लिये रनगम, जावरा, मन्दनौर, मट्टदपुर, नारायणगढ़, बायेदा,

पत्रलापण, वरदावदा, आलोट, बदनगर आदि गाँवों के आद्यक भाविकाओंने भी बंधार कर काम प्राप्त किया था। इस प्रकार सारा चतुर्मास तपस्या, प्रभावना, पूजा, रथयात्रा, वरघोटा आदि धार्मिक कार्यों के साथ सोत्सव शानन्द व्यतीत हुआ।

प्रस्तुत 'श्रीअक्षयनिधितपविधि तथा पौषधविधि' नामक पुस्तक गुरुश्रीजी-धीमानधीजी श्रीमनोहरश्रीजी धीभावधीजी की आशावेत्तिनी शान्तस्वभावशालिनी-धीमति-माष्ठीजी-श्रीशोहनधीजी के स्वर्गरोदय के स्मारक रूप में साष्ठीजी श्रीफूलधीजा, मगनधीनी, उत्तमधीजी, लक्ष्मीधीजी के सदुपदेश से खाचरौद-जैनसघने छपा कर प्रकाशित की है। इसके जिज्ञासु भाईवहिनों को पोस्टस्वर्च भेज कर पुस्तक मंगा लेना चाहिये। पुस्तक मिलने के पते पुस्तक के पिछले पृष्ठ पर छपे हुए हैं।

संवत् २००० }  
चैत्रशुक्ल ५ }

मुनि-प्रियाविजय ।  
मु० सियाना ( मारवाड )



# प्रासंगिक-प्रदर्शन ।



संसार में जिस प्रकार अविधि से खेत में डाला हुआ बीज वृद्धि नहीं पाता, अविधि से लगाया हुआ वाग सफल नहीं होता, अविधि से बनाया गया मोहन परिणाम-सुंदर नहीं होता और अविधि से किया हुआ कोई भी कार्य कार्यरूप में परिणित नहीं होता । उसी प्रकार पूजा, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, आदि धार्मिक-क्रियाएँ भी अविधि से वास्तविक फल-प्रदाता नहीं होतीं । इसीसे शास्त्रकार महर्षि योंने हर एक धार्मिक-क्रिया का विधि-विधान कायम किया है और स्पष्ट लिखा है कि आत्म-हित की चाहना करने एवं संसार-परिभ्रमण का दुःख मिटाने की अभिलाषा रखनेवाले पुरुष-स्त्रियों को धर्म सम्बन्धी प्रत्येक क्रिया विधि पूर्वक ही करना चाहिये । जो लोग विधि-मार्ग की अवहेलना कर, या शून्य-मनस्क हो धर्म-क्रियाओं का आचरण करते हैं, उन्हें जो उनका यथार्थ फल-लाभ नहीं मिलता ।

शास्त्र-निर्दिष्ट अनेक धर्मक्रियाओं में से पौषध भी एक साधु के समान उत्तम प्रकार की क्रिया है, जो धर्म को परिपुष्ट करनेवाली और दुःख मन्ताप का नाश करनेवाली है । इसमें साजसज्जा का त्याग, शरीर-विमूया का परिहार, ब्रह्मचर्य का पालन और यथाशक्ति उपवास, भायथिल, निधिरा या एकासणा तप का आचरण किया जाता है, पूर्व-प्रविलेखनादि क्रियाएँ साधुवत् जयणा पूर्वक की जाती

श्रापकों के लिये क्रमिक धाम-विकाशार्थ जो द्वादश व्रत यतः राये गये हैं, उनमें से यह ग्यारहवा, चार शिक्षाव्रतों में से तीसरा शिक्षा-व्रत है जो चार पहर, आठ पहर या अधिक अवधि तक भी अपनी इच्छा के अनुसार किया जा सकता है। इस व्रत के प्रभाव से सुप्रसिद्ध गानन्दादि अनेक भव्य परमानन्द विलासी बने हैं। इसीसे कहा जाता है कि-  
 ' भयोरगमदच्छ्रेयं, पौषवत्पौषधव्रतम् '—समाग-रूप सर्व का मद उतारने में यह व्रत पौष-मास के समान है।

प्रस्तुत पुस्तक में इसी पौषध-व्रत की विधि यही सुगमता से गुम्फित है—जिसको याच कर अल्प-पठित पुरुष-स्त्री भी अपनी पौषध-क्रिया सहूलियत से कर सकते हैं। वर्तमान में प्रेसों का साधन होने से 'पौषधविधि' की अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, उनमें प्रायः विधि की समानता नहीं है। इस कारण इस फेर-फार के लिये कभी कभी पौषध-कारकों में परस्पर बलह भी पैदा हो जाना है जो इसकी बाराधना को क्षुणित किये बिना नहीं रहता। यहाँ तक कि वैमनस्य के बजह से लोग पौषध करना भी छोड़ देते और प्रत्युत उसकी निन्दा करने लग जाते हैं, अतः इसकी विधि की समानता होना जरूरी है। इस इसी हेतु को लक्ष्य में रख कर श्रीसौधर्मवृहत्सपागच्छ में सय जगह समान रूप से पौषधविधि प्रचलित होने के लिये यह विधि तैयार करके छपा कर प्रकाशित की गई है, अस्तु। पौषध, दिशावकासिक और सामायिक कारकों को क्रिया की निर्दोषता के लिये नीचे के दोष भी टालने की सप रचना चाहिये। इन क्रियाओं के करते समय आभूषण-गहना, इंगलिश-छोटी घड़ी, स्वर्ण-मय-बटन आदि जोपिमी कोई चीज पास में नहीं रखना

चाहिये । ऐसी चीजों को समाल रखने या गुम जाने की चिन्ता रहती है, यदि गुम जाय तो आर्च-रौद्र भी पैदा होता है-जिसस उन क्रियाओं में दोष लगता है ।

### पौषध के पाच अतिचार—

“ १-शय्या-सथारा की भूमि अच्छी तरह नहीं देखना और देग तो बराबर नहीं दसना । २-शय्या-मथाग की जमीन अच्छा तरह नहीं पूजना और पूजे तो बराबर नहीं पूजना । ३-स्थडिल-माथा करने की भूमि अच्छी तरह नहीं तपामना, तपामे तो बराबर नहीं तपामना । ४ स्थडिल-माथा तथा पौमहशाला की जगह नहीं पूजना और पूजे तो बराबर नहीं पूजना । ५-पौषध अधूरा पारना, पौषध में घर या व्यापार की चिन्ता करना और पौषध के दोष टालने की तप नहीं रगना । ”

### पौषध के अठारह दोष—

“ बिना पौषधवाले का लाया हुआ बाहार, पानी आदि वापरना १, पौषध में सरस-स्निग्ध भोजन करना २, उत्तर पारणा में पुष्टिकर विविध सामग्री वापरना ३, पौषध में या उसक निमित्त देह-विभूषा करना ४, पौषध में बख्र धोना, धुलाना ५, पौषध में पहनने के लिये आमूषण रगवाना या पहनना ६ पौषध के लिये बख्र रगवाना या रगना और पौषध में रगीन बख्र वापरना ७, पौषध में शरीर का मेल उतारना, उतरवाना ८, पौषध में अकारण सोना, या चैटे चैटे नीन्द्र लेना और रात्रि को सथाग पोरिसी भणाये बिना या सथारा किये बिना सो जाना ९, पौषध में स्त्रियों की कथा कहना १० पौषध में भोजन-कथा करना ११, पौषध में राजकथा करना १२, पौषध में देशकथा करना-उसके भस्मे



युरेपन का घर्षण करना १३, पौषध में जमीन को बरार देखे पुजे घिना मात्रा या स्थण्डिल परठना १४, पौषध में किसीकी निन्दा करना, कठोर घचन बोलना और खुगली ब्याना १५, पौषध में माता पिता, भाई, बहिन, स्त्री, पुत्र आदि सम्बन्धियों से सावध वात्सलाप करना या इनका अधिक परिचय रखना १६, पौषध में चोरों, हरामियों और संसारियों की कथा प्रशम्ना करना १७, तथा पौषध में स्त्रियों के अगोपाग देपना, उनके साथ ह्याम्य घुतुहल करना और रागोत्पादक घाते करना १८ । ”

### दिशावकासिकपौषध के ५ अतिचार—

१ प्रमाण में रक्षती हुई भूमि के बाहर से किसीके द्वारा कोई घस्तु मगाना । २ प्रमाणित-भूमि के बाहर किसीको किसी कार्य के घाम्ते आदेश देना या किसी के द्वारा कोई चीज मगाना । ३ नियमित-भूमि के बाहर रहे हुए मनुष्य को खूँपार कग्घे किसी कार्य के लिये भूचना देना । ४ नियमो-परान्त भूमि के बाहरवाले मनुष्य को अपना रूपादि दिग्वा वर घिना बोले अपने पास बुलाना । ५ नियमित-भूमि के बाहर रहे हुए मनुष्यों को ककर आदि फेंक कर कोई सन्देश कहना ।

### मामायिक के ५ अतिचार—

१ घर, हाट, अग्नि के सावध श्यापार की मन में चिन्ता करना । २ गाली, कठोर-भाषा और मर्मवचन बोलना । ३ सावध-कार्यों में काया को प्रवृत्त करना, घिना पूजे बैठना, भीति आदि का जोटा लेना । ४ सामायिक अधूरी पारना या उसका आदर न करना । ५ निन्दादि प्रमाद से सामायिक की या नहीं ? इस प्रकार स्मृति-विहीन होना ।

## सामायिक के पचीस दोष—

“ मन के दश दोष—१ बुद्धि को देख कर रोप करना, २ विषय न रखना, ३ मूर्खार्थ की चिन्ता न करना, ४ मनमें उद्वेग रचना, ५ यश की धाँस करना, ६ गुणों का विनय न करना, ७ लोकापवाद के भय में सामायिक करना, ८ व्यापार की चिन्ता करना, ९ फल का स्वदेह रचना, १० घनादि शक्ति का नियाना करना । ”

“ वचन के दश दोष—शुचन बोलना १, हृषाग करना २, पाप का आदेश देना ३, लपारी करना-अधिक बातें करना ४, कलह-ककाम करना ५, भाना जाना कहना ६, गाली देना ७, बालकों को रमाना ८, बिकथा करना ९, दास्य, मझरी करना १० । ”

“ काया के बारह दोष—१ चल-विचल आसन रचना, एक आसन में न बैठना, २ दिशा-विदिशा में देखना, ३ पाप कार्य करना, ४ आलस्य से शरीर को मरोड़ना, ५ गुणों का आराधना करना, ६ भक्ति या स्तम्भ आदि का छोटा लेना, ७ देह का मूल उतारना, ८ पाग-पाद खुजाना, ९ पग ऊपर पग चढ़ा कर बैठना, १० गुणेंद्रिय को उघाड़ी रखना, ११ शरीर को कबलादि में टाँपना, १२ निद्रा लेना । ”

इन दोषों के अलावा कायोत्तम और यन्दन के दोष भी टालने की यथाशक्ति सव रचना चाहिये । निर्दोष सामायिक, पौषध और दिशायकामिक करने से ही वास्तविक फल-लाम मिलना और कर्मों की निर्जरा होकर जन्म-मरण का दुःख मिटता है ।

## अक्षयनिधितप-माहात्म्य—

जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध भरत-क्षेत्र की राजगृह-नगरी में 'सवर' नामक सेठ रहता था, उसकी स्त्री का नाम 'गुणवती' था। पूर्वजन्माजित पाप-कर्म के उदय से उनके घर में दुःख और शक्ति का निवास था। द्रव्य का अभाव होने से उनका आजीविता-कार्य बड़ मुकट से चलता था। कुछ काल के अनन्तर गुणवती के गर्भ रहा-उसके प्रभाव से सठ को व्यापार में उत्तरोत्तर धन-लाभ होने लगा। अन्य व्यापारी भी उसको योग्य सहयोग देन लगे। इस प्रकार सवर के घर में दिन-दूनी और रात-चौगुनी धन-राशि एकत्रित होने लगी। स्वल्पकाल में ही वह धनद के समान बड़ा धनपति बन गया और लोगों में सर्वत्र वह मारो यश प्राप्त हो गया।

गर्भ-स्थिति परिपूर्ण होने बाद गुणवतीने एक अति स्वरूपवती पुत्री को जन्म दिया-उसकी नाल दाढ़ने के लिये गाढ़ा गोदते समय भूमि में अशक्तियों के भर हुए कलश निकले। यह वान राजा के पास पहुँची, उसने और शहर की जनताने सेठ को बड़ा भारी सम्मान दिया। मउने अति नन्दित होकर पुत्र जन्मोत्सव के समान महोत्सव करके अपनी प्रियपुत्री का नाम 'सुन्दरी' कायम किया। क्रम से वह द्वितीया के चन्द्र-सदृश अवस्था, कला विज्ञान, रूप-सम्पत्ति और लावण्य से अपने नाम को नार्थक करने लगी। बाल-क्रीड़ा करते समय सुन्दरी जहाँ-जहाँ जमीन गोदती थी, वहाँ-वहाँ से अनेक मणि, मानिक, मोतियों से भरे हुए कलश निकलते थे। कहा भी है कि—

पदे पदे निधानानि, योजने रमकुम्पिका ।

भाग्य-हीना न पश्यन्ति, बहुरत्ना असुन्धरा ॥ १ ॥

-भाग्यशालियों के लिये जगह-जगह निधान और योजन-योजन पर रस-कुम्पिकार्षे विद्यमान हैं । परन्तु पृथ्वी बहु-रत्नशाली होने पर भी ये भाग्य-हीनों को दिग्दर्श नहीं देते ।

सुन्दरी धीरे-धीरे युवावस्था को प्राप्त हुई, उसकी शरीर-शोभा गम्भा-उर्वेदी या गति-प्रीति के समान विशेष दीखने लगा । 'योग्य कन्या योग्य वर को दा जाय तर्मा दाम्पत्य सुख मिलता है' सेठ के मन में इस चिन्ताने विलास करना आरम्भ किया । आगिर उन्ही राजगृह नगरी में समुद्रप्रिय सेठ का लडका 'श्रीदत्त' मिल गया, जो सुन्दरी के अनुरूप वय और गुण में सम्पन्न था । सहरमेठने अत्यन्त धाम-धूम से अपनी प्रियपुत्री सुन्दरी का विवाह श्रीदत्त के साथ कर दिया और दहेज में विपुल धन-सम्पत्ति दी ।

ससुर के घर में सुन्दरी के पेर पढते ही अगणित निधान प्रगट हुआ-जिसने ससुर-पक्ष के लोगों को अनन्द आनन्द हुआ और सुन्दरी की यश कीर्ति बढ़ने लगी । सुन्दरी के मोसाल-पक्ष के लोगोंने भी घटे आम्रह के साथ सुन्दरी को जीमने का आमन्त्रण दिया । उहाँ वह जीमने को गई और निधान प्रगट हुआ । इस प्रकार सुन्दरी जहाँ-जहाँ गई वहाँ-वहाँ उसफ चरण पढते ही निधान प्रगट होने लगे, इससे उसका मान-पान अधिकाऽधिक बढ़ गया । एकदा वहाँ पर अनेक शिष्यों के परिवार से श्रीधर्माधोवाचार्य का पधारना हुआ । गजा आदि सभी चन्दन करने और उपदेश धरण के लिये उनकी सेवा में उपस्थित हुए । आचार्य-भगवान्ने समयानुकूल धर्मदेशना देते हुए फरमाया कि—

“ मनुष्य जन्म को सफल करने के लिये जिनेश्वरोंने दान-शीलादि चार प्रकार का धर्म बताया है । उसमें तपो धर्म की आराधना करने से अपूर्व-पुण्य का बन्ध होता है- जिससे उसे आगामी भय में महान सुख-सम्पत्ति मिलती है । तप निकाचिन ( अवश्य भोगने योग्य ) कर्मों को भी अग्निगोला के समान जला कर नष्ट कर देता है । तपस्या के प्रभाव से ही मनुष्य उभय-लोक में मनोहर रूप, दीर्घायु, आरोग्यता, शारीरिक-बल और अखूट धनसम्पत्ति प्राप्त करता है । जो तप या उसके करनेवाले का बनावट करत है, वह रोगी और दरिद्र अवस्था का पात्र बनता है, इतन ही नहीं, किन्तु उसे सदा अपना जीवन गुलामी और निराशा में बिताना पड़ता है । ”

व्याख्यान के अनन्तर सुन्दरीने नम्र-भाज से पूछा कि-  
स्वामिन् ! पूर्वभय में मैंने कौनसा धर्माराधन किया ? जिससे मुझे स्थान-स्थान पर निघान और यश मिला । आचार्यदेवने  
करमाया कि—

“ धातकीखड के पूर्व-भरतक्षेत्र में ‘ खेटकपुर ’ नामक नगर था, उसमें ‘ सयम ’ नामक सेठ रहता था जो धर्म और धन-सम्पत्ति में विश्व-विख्यात था । उसकी पत्नी का नाम ‘ ऋजुमती ’ था जो नाना प्रकार के तप करने और दानाराधना करने में सदा अनुरक्त रहती थी । लोग भी उसके तप की और उसका गूथ अनुमोदना करते थे । उसके पाड़ोस में रहनेवाली वसु मेठ की स्त्री ‘ सोमसुन्दरी ’ ऋजु-मती की प्रशंसा सुन कर अत्यन्त जलती और निन्दा करती थी । कहा भी है कि—

भूष्यो ब्राह्मण यगायु ढोर, चाँप्यो नाग नासतो चोर ।  
राड भांड ने मातो साड, ए मातधी ऊगरिये मांड ॥

किसी समय समय-सेठ व पादोस में आग लगी, वह समय सेठ के घर के समीप भी आ पहुँची । लोगों को मालूम होने लगा कि अब समय का घर बचता मुश्किल है । सोमसुन्दरी मन ही मन आनन्द मनाने लगी कि समय का घर अब तो अवश्य राख हो जायगा, परन्तु क्रजुमती के दर-प्रभाव से समय के घर का एक भग भी नहीं जला, साग अग्नि-प्रकोप अपने आप शांत हो गया । सोमसुन्दरी के सारे मानसिक मगोरथ रक्षातल में घंल गय और वह मन ही मन गिद-गिहाती रह गई । इसी प्रकार एक चार चोर-डागुओं की घाड नगर में आई, इससे सोमसुन्दरीने सोचा कि-अब की बार समय-सेठ का घर लुट जायगा । लेकिन क्रजुमती के तप प्रभाव से चोरों की समय के घर पर दृष्टि तक नहीं पड़ी, उसका अशभाव नुकसान नहीं हुआ । धारिर समयसेठ और क्रजुमती धर्मध्यान में वसते हुए भर कर देवलेश चले गये ।

सोमसुन्दरी ईर्ष्या और आर्त-रोद्र ध्यान से मरणात्मक हुई, एक धावक के मुग में नयकार महामत्र सुना-जिमके प्रभाव से भर कर मथुरा नगरी के जितशत्रु राजा के यहाँ चार राजकुमारों के ऊपर ' सर्वहि ' नामक पुत्री हुई । किमी शत्रुराजाने जितशत्रु पर चढ़ाई की, उसमें जितशत्रु मारा गया । शत्रुराजाने सारी मथुरा को लूट ली और सर्वहि पर भी भारी सफट आ पडा । अपनी प्राणरक्षा के लिये सर्वहि यहाँ से रात को अकेली भाग निकली । सारी रात इधर-उधर घूमती रही प्रातःकाल थक कर वह एक कुण्डल पर रुक गई । कोद विधाघर उसके रूप लायण्य पर मुग्ध-यत्न

कर उसको ले गया और उसने उसके साथ विवाह कर लिया। विवाह होते ही विद्याधर का सर्व ऋद्धि समेत मरान अग्नि से जल गया। अतः विद्याधरने सर्वर्द्धि को अनिष्ट समझ कर उसी जगल में छोड़ दी। उस पर एक पल्लीपति की दृष्टि पड़ी, उसने उसको अपने घर में खी बना कर रखा। तीसरे दिन ही पल्लीपति का सारा घर जल कर खार हो गया—जिससे उसने भी उसको निवाल दी। कोई सार्धवाह उसको लेकर चला, पर रास्ते में चोरोंन सार्धवाह का सब धन-माल लूट लिया, वह भी सर्वर्द्धि को छोड़ कर चला गया। इस तरह सर्वर्द्धि सर्वत्र तिरस्कार पाती हुई और दुःखी होती हुई उसी जगल के एक तालाब की पाली पर खड़ी होकर अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप करने लगी। भाग्य योग से कोई तपस्वी मुनि विहार करते हुए उसी तालाब की पाली पर आ विराजे। सर्वर्द्धिने हाथ जोड़ कर उनसे पूछा कि—‘मैंने ऐसा कौन पापकर्म किया जिससे मुझे स्वान स्थान पर दुःख के सिवा और कुछ भी सुख नहीं मिलता?’

मुनिगने ज्ञानबल से कहा कि—पिछले भव में तूने तप और नपकरणगलों की बहुत निन्दा की और उनका अनिष्ट करना चाहा है। उसी कर्मोदय से राजपुत्री होने पर भी तेरे को भारी दुःख देखना पडा और देखना पडेगा। इस दुःख से छुटकारा पाने की इच्छा हो तो ‘अक्षयनिधितप’ करना चाहिये। जो त्रिधिशुद्धि और अन्त करणशुद्धि से इस तप का आराधन करता है, उसके पास विघ्न और शक्ति नहीं आत, वह प्रतिदिन इसके प्रभाव से अमूढ सुख-समृद्धि पाता है।

सर्वर्द्धिने मुनिवर की बातलाई हुई विधि से यथाशक्ति अक्षयनिधितप का आरम्भ किया। उसको उसने प्रथम, द्वितीय

और हनीय वर्ष में उत्तरोत्तर सामान्य विधि से और चतुर्थ वर्ष में विशेष विधि से तपाराधन किया। तप के पूर्ण होने पर वहाँ विद्याधरों का एक समूह कीर्दार्य आया, उसमें वह विद्याधर भी था-जिसने पहले सर्वज्ञि के साथ शादी की थी। कई दिनों के बाद प्रातः अपनी प्रियपत्नी सर्वज्ञि को वह अपने अंतःपुर में ले गया, वहाँ वह आनन्द से रहने लगी। विद्याधर के आश्रय में रह कर सर्वज्ञिने अक्षयनिधि तप की तपाराधना वड़े समूह भाव से की। उसीके प्रभाव से मर कर तु सत्रशेठ की 'सुन्दरी' नामक पुत्री हुई है। पूर्व भव में अक्षयनिधि तपाराधन करने से तेरे को स्थान-स्थान पर निधान और यश प्राप्त हुआ है।"

गुरु के मुग्धारविन्द से अपना पूर्व-भव सुन कर सुन्दरी को जातिस्मरणज्ञान हुआ, उससे उसने अपने पूर्वभव का स्वरूप यथावत् देगा। प्रसन्न चित्त से गुरु को बहना करके सुन्दरी अपने घर आई और उसने समूह-भाव, एवं विशाल लक्ष से अक्षयनिधितप का प्रारम्भ किया। उसमें अनेक राजा, मंत्री, राणी, सेठ, नामत आदि लोग भी शामिल हुए। तपाराधना में सुन्दरी के उदार दिल को देग कर लोगोंने उसका नाम 'अक्षयनिधि' रक्खा और वह उसी नाम से सर्वत्र प्रसिद्ध हुई। देवताओंने भी प्रसन्न होकर उसके ऊपर पुष्प-वृष्टि की। इस प्रकार सानन्द सुखमोग करने हुए सुन्दरी को दिव्य-स्वरूप चार पुत्र और चार पुत्रियों की प्राप्ति हुई। अन्त में विषय-वासना से विरक्त होकर सुन्दरीने भागवती दीक्षा ली। उसका भले प्रकार परिपालन कर और शुद्धध्यान से घनघाती कर्मों का नाश कर उसने केवल-ज्ञान प्राप्त किया। अवशिष्ट आयु पूर्ण होने पर -



अनन्त और अव्यावाहिक स्थान पर जाकर जन्म-मरण के दुःख से सदा के लिये छुटकारा पाया ।

‘अक्षयनिधितप का कितना अपूर्य और अचिन्त्य महत्त्व है ?’ यह ऊपर के दृष्टान्त से भलीभाँति समझ में आ सकता है । इसलिये जो पुरुष या स्त्री अपनी शक्ति के अनुसार विधि-विधान के साथ इस तप का आराधन करते हैं, वे भी सुन्दरी के समान उभय लोक में अचण्ड सुख-समृद्धि के भोक्ता बनते और सदानन्दी पद ( मोक्ष ) पाते हैं ।

ध्यान में रखने योग्य बातें—

अक्षयनिधितप का आरम्भ चैत्री-पंचाङ्ग के अनुसार भाद्रपदादि ४ से किया जाता है और इसकी पूर्णता पन्द्रह दिन में होती है । इसमें प्रति-दिन एकासना, छेले दिन उपवास और सोलहवें दिन वियासना किया जाता है । अगर कोई निविगइ आयविल या एकान्तर उपवास करके भी इस तप की आराधना करना चाहे तो कर सकता है । आय-विल में नमक, कालीमिरच आदि चीजें नहीं वापरना, किन्तु आलोना भोजन करना चाहिये । कल्पसूत्र धयण वाचन और मोटी तपस्या करने के कारण पर्युषणपर्ण के अन्दर इस तप की आराधना का मौका न मिल सके तो श्रावण, आसोज या कार्तिक में भी आराधना की जाय तो कोई हरकत नहीं है । परन्तु पाप्मीघर, आसोज भोली और धानपचमी, इनमें से कोई भी पर्व शामिल लेकर आराधना करना चाहिये ।

यों तो यह तप चार वर्ष में पूरा होता है, परन्तु अशक्ति के कारण एक या दो वर्ष भी किया जाय तो भी लाभ-दायक ही है । तप की समाप्ति होने पर इसका यथाशक्ति

उजमणा ( उद्यापन ) भी कर लेना चाहिये-जिसमें विविध जाति के फल-फूल, पषाण, सूत्र-ग्रन्थ और ज्ञानोपकरण चढ़ा कर अष्टाद्विकोत्सव पूर्वक अष्टोत्तरिंशत्-शान्तिस्नातपूजा भणाना और मघधात्सत्य करना चाहिये ।

जितने दिन यह तप किया जाय, उतने दिन तक भूमि-शयन, ब्रह्मचर्य परिपालन, मन-वचन-काया का सयम कलह-ककास का त्याग, रातदिन स्वाध्याय-ध्यान में घर्त्तना, सासारिक व्यापार-घन्धों का त्याग और क्रोधादि प्रमादों का परिहार करना चाहिये । तप का वास्तविक फल योग्य विधि-विधान का उपयोग करने और कपार्यों को छोड़ने से ही मिलना है । अतएव तप आराधना का जो विधि हो उसको उसी प्रकार शान्ति पूर्वक करना चाहिये ।

इसी प्रकार तीनों टाइम उत्कृष्ट देवमदन, दोनों टाइम प्रतिग्रमण, जिनप्रतिमा की पूजा ' ॐ ह्रीं नमो नाणस्म ' इस पद की बीस माला गिनना, चावलों के पकावन स्वस्तिफ करके उन पर गदाम-सोपारी मेलना, एकावन लोगस्स का काउस्सग्ग करना और श्रुतज्ञान के दोहा बाल कर खमास-मण पूर्वक बीस प्रदक्षिणा देना, इत्यादि क्रिया भी शान्त चित्त से सदा करना चाहिये ।

तप आरम्भ करने के एक दिन पहिले तप करनेवाले धावक-श्राविकाओं को भेले होकर शुभ चोषड़िया में जिन मन्दिर, धर्मशाला, उपाश्रय या अन्य निर्वध स्थान में ऊँचे आसन पर जिस में पन्द्रह सेर चावल समा सकें पेसा तावा, पीतल, चादी या मिट्टी का कलश ( घड़ा ), चावलों का स्तविक करके स्थापन करना, उसमें केशर का साधिया...

करके रुपा नाणा मेलना, उमवे मुख पर श्रीफल रस कर  
 रूपर लाल-घोला बटका लच्छा ( मोली ) से बाध कर फूलों  
 की माला पहिराना । कलश के दहिने भाग में अक्षण्ड-दीपक  
 और बाये भाग में कल्पसूत्र या अन्य किन्हीं भी सूत्र की  
 पुस्तक रखना । सामने एक त्रिगडा में छोटी धातुमय जिन  
 प्रतिमा या सिद्धचक्र का धातुमय गट्टा रखना और मारे  
 कम्पाउण्ड को चन्दुया पूटिया से निणगारना । अक्षयनिधि  
 तप की आराधना-विधि हमेशा इसी कलश के सामने  
 करना चाहिये ।

प्रातः काल में राइयपट्टिकमण करके इस तप सवधी  
 ' ॐ ह्रीं नमो नाणस्म ' इस पद की धीम माला गिन ली  
 जाय और ' अक्षयनिधितप आराधनाधे करेमि काउस्सग्ग  
 अन्नत्थं ' कह कर एकाग्रन लोगस्स का काउस्सग्ग कर लिया  
 जाय अथवा उम वक्त टाइम न मिलन पर देवनिधपट्टिकमण  
 किये याद रात को भी कर लिया जाय तो कोई हर्जा नहीं  
 है । अपनी सहूलियत के मुताबिक किसी भी समय पर माला  
 गिन लेना और काउस्सग्ग कर लेना चाहिये ।

—विजययतीन्द्रसुरि ।



# अक्षयनिधितप-विधि ।



प्रातःकाल में तप-कारक श्रावक-श्राविका को प्रथम जिनप्रतिमाजी की पूजा करके स्नात्रपूजा भणाने बाद कलश के सामने बाजोट के ऊपर चावलों के णकावन साधिया कर उन पर बदाम, सुपारी, पतासा और यथाशक्ति पैसा या आनी चढ़ना । फिर एक खमासमण दे कर ' इच्छाकारेण सदिसह भगवन् ! इरियावरिय पडिक्कामि ? इच्छ, इच्छामि पडिक्कमिउ इरियावरियाण०, तस्स उत्तरी०, अन्नत्थ० ' कह कर एक लोगस्स या चार नवकार का काउस्सग्ग करके लोगस्स कहना । फिर ' इच्छाकारेण सदिसह भगवन् ! श्रीअक्षय निधितप आराधनार्थं चैत्यवन्दन करु ? इच्छ ' कह कर नीचे का चैत्यवन्दन कहना ।

शासनपति महिमा-निधि, वर्द्धमान जिनदेव ।  
यासव नरपति आय के, सेव करे नितमेव ॥ १ ॥  
समवसरण में बैठ के, भाष्यो भवि हितकार ।  
अक्षयनिधितप आदरो, ज्ञान-रण दातार ॥ २ ॥

चेह्यवन्दन पटिकमण, प्रह्यचर्य-वत धार ।  
 ज्ञान ज्ञानि की सेवना, करिये चित्त उदार ॥ ३ ॥  
 सूत्रें तप बहुविध कथा, शिवमुग्ध दायक जेह ।  
 अक्षय वैभय पामवा, ण तप पण गुण गेह ॥ ४ ॥  
 विधियुत जे आराधशे, धिर कर मन चच काय ।  
 सूरियतीन्द्र-पद ते लहे, सुन्दरी सम मुग्धदाय ॥५॥

' नमुत्युण० ' बोलके ' आभवमगंडा ' तक  
 जंय बीधराय कहना । फिर दो ग्रमासमण दे कर  
 ' इच्छाकरेण मंदिसह भगवन् ! चैत्यवन्दन करु ?  
 इच्छ ' कह कर नीचे का चैत्यवन्दन कहना ।

भय-भजन जिनवीरनो, बर्ते शामन आज ।  
 आगमयाणी तेहनी, राजे मयल समाज ॥ १ ॥  
 सम्यग् श्रुत की संपदा, एहज मत्य प्रमाण ।  
 विपमा पंचमकाल में, करे शुद्ध सरधान ॥ २ ॥  
 अक्षयनिधि-तप नेहमा, भाष्यो कवलिराय ।  
 विधि संयुत आराधतां, कर्म-रोग मिट जाय ॥ ३ ॥  
 घरम जिनेश्वर-शासने, द्योतित तपः प्रकाश ।  
 सूरियतीन्द्र तप धामने, वन्दे भाव हुलास ॥ ४ ॥

' ज किचि नामतित्थ०, नमुत्युण० ' गड़े होकर  
 ' अरिहतचेइयाण०, अन्नत्थ० ' कह कर एक नवकार

का काउस्मग्ग कर, पार कर ' नमोऽर्हत्तिसद्धाचार्यो-  
पाध्यायमर्यमाधुम्यः' धोल कर नीचे की धुई कहना ।

सेवो भविषण तपपद भावे, द्वादश भेद विचारी जी,  
षाड्य अभ्यन्तर करता भक्तं, कर्मरुष्ट अघ टारी जी ।

अन्तर आतम ध्यान अभ्यासे, संवर ममता धारी जी,  
अनुपम लीला मपद पावे, अविचलपद अधिकारी जी ?

' लोकरस्म०, मठ्वलोए अरिहतचेडयाण०, अ-  
न्नत्थ० ' एक नवकार का काउस्मग्ग कर, पार कर  
नीचे की धुई कहना ।

समयसरण में कनकमिहासन, त्रिभुवन नायक राजेजी  
धीमधानक तप करता पामे, सुखममृद्धि समाजे जी ॥

वीरादिक चौवीस जिने-वर, तप करी कर्म गपयाया जी ।  
निर्मल केवल जेहनु शामन, वत्तें जग सुग-दायाजी ॥

'पुक्करवरदी०, सुअस्म भगवओ करेमि काउस्स-  
ग्ग वदणवत्तियाण०, अन्नत्थ०' एक नवकार का काउ-  
स्मग्ग कर, पार कर 'नमोऽर्हत्तिसद्धा०' धोल कर नीचे  
की धुई कहना ।

कर्म महीधर भेदन पवि मम, तपवर बहुविध जाणो जी ॥  
अक्षयनिधि गुण-सपद दाता, धृतधर सूत्र प्रमाणो जी ॥

शुरूगम विधि उद्यापन माथे, आराधो भलि भावे जी।  
सूरिगतीन्द्रशिव सुन्दरी वरवा, अहनिशतपनेध्यावेजी।

‘ सिद्धाण बुद्धाण० ’ नीचे बैठ कर ‘ नमुत्थुणं० ’  
ग्वडे होकर ‘ अरिहतचेडयाणं० अन्नत्थ० ’ एक नव  
कार का काउस्मग्ग कर, पार कर ‘ नमोऽर्हत्सिद्धा० ’  
बोल के नीचे की थुई कहना ।

श्रुनदेवी जिनवाणी, भापक लोकाऽलोक ।  
जिनपति इम भापे, देवे गणधर धोक ॥  
माली-अर्जुन धन्ना, इडप्रहारी जाण ।  
तप वर आचरता, पाम्था पद निर्वाण ॥ १ ॥

‘ लोगस्स०, सन्नलोए अरिहतचेडयाण०,  
अन्नत्थ ’ एक नवकार का काउस्सग्ग कर, पार कर  
नीचे की थुई कहना ।

सुविहित मुनि सूरि, वरिया पद महानन्द ।  
त्रीजे भव तप करी, पाया पद जिनचन्द ॥  
उद्धस्सपणं नप, करतां अतिशयवन्त ।  
केवल मत्ता-भोगी, पूजे सुरगण-सन्त ॥ २ ॥

‘ पुम्भ्वरदीरुं० सुअस्स भगवओ करमि काउ-  
स्सग्ग वदणवत्तियाए० अन्नत्थ० ’ एक नवकार का  
काउस्मग्ग कर, पार कर ‘ नमोऽर्हत्सिद्धा० ’  
नीचे की थुई कहना ।

इम तपवर धारी, तस पटधर सुखकार ।

सिद्धान्ते भाष्या, दोष हजार ने चार ॥

पचम कलिकाळे, युगप्रवर अवतार ।

सूरियतीन्द्र तो घन्दे, आणी भाव उदार ॥ ३ ॥

‘ सिद्धाण बुद्धाण० ’ नीचे बैठ कर ‘ नमुत्थुण०,  
जावति०, खमा०, जावत०, खमा०, नमोऽर्हतिमद्धा०,  
उवमग्गहर० ’ अथवा नीचे का स्तवन करना ।

कर रे कर रे कर रे, श्रीचिनचद०, ए राह—

अक्षयनिधि—तप आदर रे, आदर आदर आदर रे ।

तप आदरी सपत्ति वर रे, अक्षयनिधि० ॥ टेर ॥

अज्ञान नाशक मिथ्या विनाशक, ज्ञान भानुतम-हर रे ।

स्वपर प्रकाशक श्रीश्रुतज्ञान की, भक्ति कर भव तर रे

॥ अ० ॥ १ ॥

पाचों ज्ञान में श्रुत है मोटो, भापे श्रीश्रुतधर र ।

श्रुत विन बोध न पामे खेतन, जिनश्रुत जग हितकर रे

॥ अ० ॥ २ ॥

ज्ञान आराधे सवि सुख साधे, लीला लहेर जस घर रे ।

ज्ञान की महिमा जग में भारी, भापे नमत चरण नरुं

वर रे ॥ अ० ॥ ३ ॥



जैनागम में ए तप भाष्यो, सदगुरु भाखे ऊचर रे ।  
 आराधी सुदरी सुख पाई, अक्षयनिधि सुखकर रे  
 ॥ अ० ॥ ४ ॥

गुरुगम लही अक्षयनिधितप कर, अरगूट खजानो भर रे ।  
 सूरिराजेन्द्र यतीन्द्रसूरि का, नित नित उठी समर रे  
 ॥ अ० ॥ ५ ॥

जय वीयराय ' आभवमगंडा ' तरु कह कर  
 ' खमा० इच्छाकारेण०, चैत्यवदन करु?, इच्छ '   
 बोल कर नीचे का चैत्यवन्दन कहना ।

तप करिये अक्षयनिधि, ऋद्धि-मिद्धि सुख हेत ।  
 ज्ञान-भक्ति भवि आदरो, क्रिया विधान समेत ॥१॥  
 तपथी नवनिधि सपजे, तपथी होय कल्याण ।  
 तपथी जग यश पामिये, तपथी लहो सुख ग्याण ॥२॥  
 अग्रद सुग्र घर पामिये, अग्रद होय प्रताप ।  
 आणा जग लोपे नहीं, दले भयो-भव पाप ॥ ३ ॥  
 मिथ्यातमने मेटवा, लेवा सम्पति पूर ।  
 सूरियतीन्द्र अक्षयनिधि, तप करतां अध दूर ॥ ४ ॥

' नमुत्थुणं० ' बोल कर ' जय वीयराय० ' सपूर्ण

कहना । उपरोक्त उत्कृष्ट चैत्यचन्दन विधि किये पाद  
अक्षयनिधितप की पूजा नीचे मुताबिक भणाना ।

### ज्ञानपदपूजा । दोहा—

नयपद में पद सातमो, स्व-पर प्रकाशरू ज्ञान ।  
आराधो भलि भाव से, तरो अनादि अज्ञान ॥१॥

हाल १, मामी मीमघर ँवदिसे०, ए राह—

नमिये भवि श्रुत नाणने, इण परभव सुग्यकारी रे ।  
ज्ञाने ठिय सम्पति लहो, अक्षय सुग्य अयिकारी रे  
॥ न० ॥ १ ॥

अज्ञान अन्गना मेट्या, ज्ञानभानु जययन्तो रे ।  
पच मेदसु मोहतो, जग में महिमायन्तो रे ॥ न० २ ॥

मति आदि पच ज्ञान में, श्रुत स्व-पर ओलग्याये रे ।  
ज्ञान अचरने जाणिये श्री श्रुतज्ञान प्रभावे रे ॥ न० ३ ॥

जिन-भापित आगमतणो, अर्ध न लहे अज्ञाने रे ।  
ज्ञाने धर्मना मर्मने, ज्ञान गुणी पहिचाने रे ॥ न० ४ ॥

१ प्रातः काल प्रतिक्रमण मे एकामनादि का पद्यकरण न  
लिया हो, तो यहाँ पर पद्यकरण लेना और ले लिया हो, तो  
याद कर लेना चाहिये ।

ज्ञानीजन जगमे बडो, राय राणा सहु नमता रे ।  
 पूजा करो श्रुतज्ञाननी, पावो सुख मन गमता रे ॥ न० ५ ॥  
 ज्ञानभक्ति करो शुद्ध मने, ज्ञान-अबोधता जावे रे ।  
 ज्ञान ध्यान गुण संपजे, सूरियतीन्द्र स्वभावे रे ॥ न० ६ ॥

दोहा—

उपकारी शशि-रवि परे, हितकारी जिम मेह ।  
 तिम मिथ्यातम भेटया, नमो ज्ञान गुणगेह ॥ १ ॥

हाल २, श्रीसीमधर माहिव आगे०, ए राह—

ज्ञानावारे पान अपाननो, जाणे सकल विचार ।  
 भक्षाऽभक्ष न जे विण जाणे, पामे न शुद्धाचार रे १

‘ प्राणी ! ज्ञान जगत सुखकारी,  
 परमानन्द दातारी रे प्राणी जा० ’ ॥ टेर ॥

कृत्याऽकृत्य मविकल्प विरुलप, धर्माऽधर्मनो मर्म ।  
 ज्ञान रहित जन ए नपि जाणे, जाने टले सहु भर्म रे प्रा०  
 ज्ञान विना धर्मश्रद्धा न प्रगटे, कज्ज अकज्ज न जाणे ।  
 कुगुरु सुगुरु गुणी अगुणी मरग्या, ज्ञान विना एक  
 ताणे रे प्रा० ॥ ३ ॥

अज्ञाने हेय ज्ञेय उपादेय, जाणे न पट्ट-द्रव्य भाव ।  
 भेदाऽभेद विचार न होवे, ज्ञाननो प्रगट प्रभाव रे प्रा० ४

ज्ञान आराधो न ज्ञान विराधो, साधो सुख अभिराम ।  
ज्ञान-भक्ति युक्ति मनरगे, जिम लपो ध्रुव विश्राम रे  
प्रा० ॥ ५ ॥

भूतिनगरना भव्य श्रद्धालु, अक्षयनिधि तप साधे ।  
यथाविधि किरिया चित्त बगे, मन्मथत्व ज्ञान आराधे  
रे प्रा० ॥ ६ ॥

ज्ञान मे सूरि यतीन्द्रपद पामे, घर-घर मगन्य चार ।  
रस-नव-निधि-रूप-चातुर्मांसे, घरत्या जय जय-  
कार रे ॥ प्रा० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्रीसुरासुरनरयामयमहिताय परमान्मने  
नमः । अनन्तवस्तुप्रकाशकं प्रपन्नराऽज्ञानमही र-  
मेदक श्रीज्ञानपद कलशश्च श्रीयामचूर्णैर्यजामहे  
स्वाहा । ”

यह मन्त्र घोल कर चासक्षेप से ज्ञान की पूजा  
करना और नैवेद्य, चावल, वृष, दीप, रूपानाणा  
चढाना । याद में कलश त्रिगढ़ा के सामने गड़ें रह  
कर हाथ जोड़ के प्रार्थना रूप से नीचे के पीठिका-  
दोहा घोलना ।

सुगकर शखेश्वर नमी, धुणस्यु श्रीधुत  
चउ मृगा श्रुत एक है, स्व-पर

अभिलाष्य अनन्त मं, भागे रचिया जेह ।  
 गणधरदेवें प्रणमिया, आगम-रघण अछेह ॥२॥  
 इम बहुली वक्तव्यता, छ ठाणवडिया भाव ।  
 क्षमाश्रमण भाष्ये कथा, गोपय सर्पि जमाव ॥३॥  
 लेश धकी श्रुत वरणबुं, भेद भला तम वीश ।  
 अक्षयनिधि तपना दिने, ग्वमाममण ते वीश ॥४॥  
 सूत्र अनन्त अर्थे सहित, अक्षर अश लहाय ।  
 श्रुतकेवली केवलपरं, भाषं श्रुत परजाय ॥ ५ ॥

फिर ग्वमाममण पूर्वक नीचे के दोहा बोलना  
 और प्रत्येक दोहा के अन्त में प्रदक्षिणा देते हुए  
 “ ” इम द्राकेदवाला दोहा बोलना ।

इगसय अडवीम म्वरतणा, तिहाँ अकार अह  
 श्रुत-पर्याय समास अश ६५ विच

॥ १७ ॥ नने  
 पूजन अर्चन २-

॥ १७ ॥

बत्तीस वर्ण  
 जे मांदि इक

अयोपशम भा  
 ठाणांग

कोडि एकावन आठ लग्न, अडसय इकासि हजार ।  
 चालीस जक्षर पद तणा, कहे अनुयोग दुवार ॥ ४ ॥

अर्थान्ते यहाँ पद कछु, जिहाँ अधिकार ठराय ।  
 ते पद श्रुतने प्रणमता, जानावरणि हठाय ॥ ५ ॥

अठार हजार पदे करी, अग प्रथम सुविलास ।  
 दुगुणा श्रुत बहुपद ग्रहे, चरण ते श्रुत समास ॥ ६ ॥

पिंडप्रकृतिमा इरु पदे, जाणे बहु अरदात ।  
 क्षयोपशमनी विचित्रता, तेहज श्रुत सघात ॥ ७ ॥

पञ्चोत्तर भेदे करी, स्थितिवन्शादि विलाम ।  
 कम्मपयडी पयडी ग्रहे, श्रुत सघात समाम ॥ ८ ॥

गल्यादिरु जे मार्गणा, जाणे तेहमा एरु ।  
 धिवरण गुणठाणादिके, तस प्रतिपत्ति विवेक ॥ ९ ॥

मार्गणा पद बामठे, लेश्या आदि निवाम ।  
 सग्रह तरतम योगसे, ते प्रतिपत्ति समास ॥ १० ॥

सतपदादिक द्वार में, जे जाणे शिव-लोग ।  
 एक दोय द्वारें करी, श्रद्धा श्रुत अनुयोग ॥ ११ ॥

बली सतादिक नव पदे, तिहाँ मार्गणा भास ।  
 सिद्धतणी स्तवना करे, श्रुत अनुयोग समास

प्राभृत-प्राभृत श्रुत नमु, पूरवना अधिकार ।  
 बुद्धि प्रवल प्रभाव मे, जाणे इक अधिकार ॥ १३ ॥  
 प्राभृत-प्राभृत श्रुत समा, माभिध लब्धि विशेष ।  
 बहु अधिकार इस्या ग्रहे, क्षीराश्रव उपदेश ॥ १४ ॥  
 पूरव गत वस्तु जिके, प्राभृत-श्रुत ते नाम ।  
 एक प्राभृत जाणे मुनि, तास करु परणाम ॥ १५ ॥  
 पूरव लब्धि प्रभाव मे, प्राभृत-श्रुत सुसमान ।  
 अधिकार बहुला ग्रहे, पदानुसार विलाम ॥ १६ ॥  
 आचारादिक नाम मे, वस्तु नाम श्रुत सार ।  
 अर्थ नाना-विध सग्रहे, ते पण इक अधिकार ॥ १७ ॥  
 दुग्मय पणविम वस्तु है, चौद पूर्वनी सार ।  
 जाणे तिणने वन्दना, इरु श्वामे सो वार ॥ १८ ॥  
 उत्पादादिक पूर्व जे, सूत्र अर्थ इक सार ।  
 विद्या मत्र तणो कणो, पूरव श्रुत भंडार ॥ १९ ॥  
 चिन्दुसार लग जे भणे, तेहज पूर्व समास ।  
 श्रीशुभ धीरना शासने, होजो ज्ञान प्रकाश ॥ २० ॥

प्रदक्षिणा पूर्ण होने बाद तप-कारक सभी  
 आवश्यक श्राविकाओं को हाथ की अंजली में चावल  
 भर कर और उसके उपर यथाशक्ति नाणा रत्न कर-

सद्ज्ञान-नीर अगाध में नित, विश्व में है जो यद्वा ।  
 पथरचनाऽमल-पंक्तियों में, लहर लेता है गडा ॥  
 सच्चूलिका-मणिरत्न जिसमें, पूरित अपरम्पार है ।  
 दुर्लभ्य आगम अम्बुनिधि को, नमन चारम्बार है ॥१॥  
 ज्ञानवसु सम धन है न जग में, आश जीवित सम नहीं  
 समता सम सौरभ है न कोई, लोभ मा दुःख है नहीं ॥  
 अतएव विभुवर ! दीजिये अथ, ज्ञानधन शम सुर्य चहे ।  
 हैं आश यह न निराश करिये, शरण में हम आ पडे ॥

ॐ ह्रीं नमोऽर्हते परमात्मने श्रीअक्षयज्ञानपदा-  
 राधनाय माक्षताञ्जलिभिः कलश परिपूजयामि  
 स्वाहा ।

ऐसा थोल कर अजली-भृत चावल कलश में  
 डाल कर, उसका मुख बाध कर आरति उतारना ।

हम तप के दिनों में प्रतिदिन प्रातःकाल १० या  
 ११ बजे उपरोक्त विधि करना, प्रातःकाल प्रतिक्रमण  
 करके जिनालय में पूजा किये याद और सभ्या को  
 दैवसिक-प्रतिक्रमण के पहले छः थुई से उत्कृष्ट  
 देव घन्दन क्रिया करना । एकासणा किये बाद पोस-  
 टविधि में ले



सन्ध्या का प्रतिक्रमण करके सोते समय संधारापो  
रिसी भी भणा ली जाय तो अच्छा ही है। अभिति।

### अक्षयनिधितप-चैत्यवन्दनम् ।

चौद सहस्र मुनिना धणी, शासनपति मुखकार ।  
चौसठ सुरपति सेवता, जिनशासन जयकार ॥१॥

श्रीजिनवाणी साभळी, लहे त्रिपदी गणधार ।  
जिन-आगम रचना करे, जगजनने हितकार ॥२॥

श्रुत में बहुविध भाषिया, तप प्रभाव विस्तार ।  
आराधे चउ मघ जे, धावा भवजल पार ॥ ३ ॥

तपश्रेणी माहें कहु, अक्षयनिधि तप सार ।  
सकल सिद्धि हेते करे, पुण्यवन्त नर-नार ॥ ४ ॥

सविधि तप आराधिये, श्रुत भक्ति श्रीकार ।  
जिनपूजा वन्दन कर, आवडयक दो वार ॥ ५ ॥

पाले शील स्वभाव मे, वरते शुद्धाचार ।  
श्रीश्रुतनी ऊपासना, गुणणो दोय हजार ॥ ६ ॥

जिनेन्द्र आगमे, भाष्यो सकल विचार ।  
रि सुसग से, करे सफल अवतार ॥ ७ ॥

## अक्षयनिधितप-स्तुतिः ।

अक्षय शिवसुख सपति कारण,  
अक्षयनिधि तप साधो जी ।  
श्रीजिनघाणी हृदये आणी,  
श्रीश्रुतज्ञान आराधो जी ॥

विधि मनशुद्धे तप आदरने,  
पूरण जग जस पावो जी ।  
बह-भव पर-भय ऋद्धि वृद्धि,  
अन्ते मोक्ष मिधावो जी ॥ १ ॥

भाद्रवदि तिथि चतुरथी दिनथी,  
ए तप आरम्भ कीजे जी ।  
एकामण तपस्या दिन-पंदर,  
चोध चउ मत्त पञ्चरम्बीजे जी ॥

उभयकाल आवश्यक वदन,  
जिनपूजन ग्रिहुं काले जी ।  
ॐ ह्रीं नमो नाणस्स ए पदनो,  
गुणणो गिण अघ टालो जी ॥ २ ॥

काउस्सग्ग वीश लोगस्स-एकावन,  
स्वस्तिक करी चित्त चगे जी ।

सरीरसकारपोसहं सबओ, बमचेरपोसहं सबओ, अवावार  
पोसहं सबओ, चउव्विह पोमहं ठामि, जाव दिवस पज्जु  
वासामि, दुविह तिविहेणं मणेणं वायाए काएण, न करेमि  
न कारवेमि, तस्स भते ! पडिक्कमामि निंदामि गरिढामि  
अप्पाणं वोसिरामि । ”

गुरु का योग न होय तो बडिल पौषघवाले श्रावक  
के मुख से या स्वय उच्यते । फिर ‘ स्वमा०, इच्छाकारेण०  
सामायिक लेवा मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ ’ कह कर मुहपत्ति  
की पडिलेहन करके ‘ स्वमा० इच्छाकारेण० सामायिक सदि-  
साऊ ? इच्छ । स्वमा० इच्छाकारेण० सामायिक ठाऊ ? इच्छ ’  
कह कर, नवकार गिन कर ‘ इच्छाकारी भगवन् ! पसाय करी  
सामायिक-दडक उच्यरावोजी ? ’ घोल के ‘ करेमि भते सामा-  
इय ’ का पाठ उच्यरना । यहाँ इतना विशेष है कि ‘ जाव निय-  
मं ’ के स्थान पर ‘ जाव पोसह ’ कहना । बाद में इरियावहि  
पडिक्कम कर ‘ स्वमा० इच्छाकारेण० वेसणे सदिमाऊ ? इच्छ ।  
स्वमा० इच्छाकारेण० वेसणे ठाऊ ? इच्छ । स्वमा० इच्छा  
कारेण० सज्जाय सदिमाऊ ? इच्छ । स्वमा इच्छाकारेण०  
सज्जाय करु ? इच्छ ’ कह कर तीन नवकार गिनना । फिर  
“ स्वमा० इच्छाकारेण० कुसुमिण-दुसुमिण-उट्ठावणी गइय  
पायच्छित्तविसोहणत्थ काउस्मग्ग करु ? इच्छ कुसुमिण-  
दुसुमिण-उट्ठावणी-राइयपायच्छित्त-विसोहणत्थ करेमि काउ-  
स्सग्ग, अन्नत्थ० ” कह कर चार लोगस्त या सोलह नवकार

का काउस्सग्न करना । बाद राहप्रतिक्रमण की विधि से राह्य-प्रतिक्रमण करना । इतना विशेष कि—‘ मात लास ’ तथा ‘अदार पापस्थानक’ के जगह ‘इच्छाकारेण सदिसह भगवन् ! गमणागमणे आलोक ? इच्छ ’ बोल कर—

“ इरियाममिति, भाषाममिति, एषणाममिति, आदान-मडमत्तनिक्खेयणासमिति, पारिद्धाणियाममिति, मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति ए पाच ममिति त्रण गुप्ति अष्ट प्रवचन-माता श्रावकतणे धर्मे सामायिक पीमद् लीघे रूद्धीपरे पाली नहीं, सुहनविराधना हुई होय ते सवि हु मन वचन कायाएँ करी मिच्छामि दुक्कड ” कहना । आसिर स्वमा० इच्छाकारेण० बहुबल संदिमाउ ? इच्छ, स्वमा० इच्छाकारेण० बहुबल करशु ? इच्छ ’ कह कर भगवानादि वदन कर के ‘ अह्माइजेसु ’ कह कर मिद्धाचल देववदन तक विधि करना ।

पटिलेहण करन की विधि—

इरियायहि० करके ‘ स्वमा० इच्छाकारेण० पडिलेहन करु ?, इच्छ ’ कहके गृहपति पडिलेहन करना । फिर अनुक्रम से चरवला, डडामण, धोती, उत्तरासन और फटासणा की पडिलेहन करके ‘ स्वमा० इच्छाकारी भगवन् ! पसाय करी पडिलेहण पडिलेहावो ? ’ कहके स्थापनाचार्य, या ज्ञानोपकरण की पडिलेहन करना । बाद मे ‘ स्वमा० इच्छा-कारेण० उपधि गृहपति पडिलेहु ? इच्छ, ’ बोल कर

पड़िलेहन करना । फिर ' खमा० इच्छाकारेण० उपवि  
सदिमाऊ ? इच्छं । खमा० इच्छाकारेण० उपधी पड़िलेहु ।  
इच्छ ' कह कर चाकी रहे हुए वसों की पड़िलेहन करना ।  
फिर उपयोग से धीरे धीरे डडासण या चरबला से वापरवा  
योग्य जगह का कचरा भेला कर, उसको पाटी या शूपड़ी में  
ले कर निर्जीव स्थान पर ' अणुजाणह जम्सगो ' कह के परठ  
कर, तीन बार ' गोमिस्इ ' कह के स्थापनाचार्य या गुरु के  
पाम आ कर इरियावहि करके गमणागमणे कहना ।

फिर उचगसग कर कटामणा शिर या खमा पर रख,  
चरबला बगल में और मुहपसि हाथ में रख कर जयणा से  
जिनमन्दिर जाना । वहाँ पर नीचे मुताचिक उत्कृष्ट देववन्दन-  
विधि से चैत्यवन्दन करना ।

### उत्कृष्ट देववन्दनविधि—

एक खमासमण देकर ' इच्छाकारेण सदिमह गगयन् ।  
इरियावहिय पडिकमामि ? , इच्छ इच्छामि पडिकमिउ  
इरियावहियाण०, तस्स उत्तरी०, अन्नत्थ० ' एक लोगम्म  
या चार नयकार का काउस्मग्ग पार कर, लोगम्म कहना ।  
तीन खमासमण देकर 'इच्छाकारेण० चैद्यवण करु ? इच्छ'  
कह कर चैत्यवन्दन कहना । फिर नमुत्थुण० बोल के जय वीय-

१ धाद्वविधि—टीका, विधिप्रपा आदि जैन ग्रन्थों में कचरा  
परिठने धाद ही ' इरियावहि ' पडिकमना लिया है ।

य आम्रमखंडा तरु बोलना । बाद में एक स्वमासमण  
 कर 'इच्छाकारेण० चैत्यवन्दन करु ? इच्छ' कह के  
 चैत्यवन्दन, 'नम्रुत्थुण०' खड़े होकर 'अरिहतचेड्याण०,  
 अन्नन्थ०' एक नम्रकार का काउस्मग, पार पर नमोर्ह०  
 यम हुई रहना । फिर 'लोगम्म०, सबलोण अरिहतचेड्या०'  
 प्रन्नन्थ०' एक नम्रकार का काउस्मग पार के दूसरी हुई  
 रहना । फिर 'पुक्खरवरदीपद्धे० मुअम्म भगवओ करमि काउ-  
 स्मग वदणत्तियाए० अन्नन्थ०' एक नम्रकार का काउस्मग  
 पार के 'नमोर्हत्ति०' तीसरी हुई रहना । सिद्धाण बुद्धाण०  
 बोलके, नीचे बैठ के 'नम्रुत्थुण०' खड़े होकर 'अरिहत-  
 चेड्याण०, अन्नन्थ०' एक नम्रकार का काउस्मग, पार के  
 'नमोर्हत्ति०' पहली हुई रहना । लोगस्स०, सबलोण अरि-  
 हतचेड०, अन्नन्थ०' एक नम्रकार का काउस्मग, पार के  
 दूसरी हुई रहना । पुक्खरवरदी०, मुअम्म भगवओ करमि  
 काउस्मग वदणत्तियाए० अन्नन्थ०' एक नम्रकार का काउ-  
 स्मग, पार के नमोर्हत्ति०' तीसरी हुई रहना । 'सिद्धाण  
 बुद्धाण०' नीचे बैठ कर 'नम्रुत्थुण०, जावत्ति०, खमा० जा-  
 वत्त०, नमोर्हत्तिद्वाचार्योपाध्यायमर्वमाधुम्पः, इच्छाकारेण  
 सदिमह भगवन्! स्तवन भणु ? इच्छ' उवमगहर अथवा कोई  
 भी स्तवन कह कर जय वीयराय० आम्रमखंडा तरु कहना ।  
 फिर 'खमा० इच्छाकारेण० चेड्यवदण करु ? इच्छ' कह के  
 चैत्यवन्दन० नम्रुत्थुण० बोल के 'जय वीयराय'

पौषधशाला मे आ कर, हरियावहि पडिकमण कर, हरिया-  
समिति भापासमिति० पाठ से गमणागमणे आलोय कर 'विधि  
करता अविधि आशातना हुई होय ते सवि हु मन वचन  
कायाएँ करी मिच्छामि दुक्कड' बोलना । फिर ' खमा०,  
इच्छाकारेण० सज्झाय सदिमाऊ ? इच्छ । खमा० इच्छाका-  
रेण० सज्झाय करु ? इच्छ ' कह कर, उमडक आसन से  
एक नवकार गिन कर नीचे की सज्झाय बोलना ।

मण्ह जिणाणमाण, मिच्छ परिहर घरह सम्मत्त ।

छविह आगस्मयम्मि, उज्जुत्तो होइ पइदिउस ॥ १ ॥

पवेसु पोमहउय, दाण सील तपो अ भावो अ ।

सज्झाय-नमुक्कारो, परोवयारो य जयणा य ॥ २ ॥

जिणपूआजिणणधुणण, गुरुधुअसाहम्मियाण वच्छल्ल ।

ववहारस्मय सुद्धी, रहजत्ता-तित्थजत्ता य ॥ ३ ॥

उवसमविवेगसवर, भासासमिइ छजीवकरुणा य ।

धम्मियजणसंमग्गो, करणदमो चरणपरिणामो ॥ ४ ॥

सघोउरि बहुमाणो, पुत्थयलिहणं पभावणा तित्थे ।

सद्धाण किच्चमेय, निच्च सुगुरुएसेण ॥ ५ ॥

पोरिमि-मुहपत्तिपडिलेहण-विधि—

छः घड़ी ( एक प्रहर ) दिन चढ़ने पर हरियावहि पडि-  
कम कर ' खमा०, इच्छाकारेण०, बहुपडिपुन्ना पोरिसि

मुहपत्ति पडिलेहुजी ? इच्छ' कह कर मुहपत्ति की पडिलेहन करना । प्रातःकाल में पचक्खाण न लिया हो और गुरु का योग हो तो द्वादशावर्चनदनविधि से वन्दना कर के 'इच्छाकारी भगवन् ! पमाय करी पचक्खाण करावोजी ?' ऐसा कह कर उपवाम, आयबिल, निवि या एरामणा का पचक्खाण लेना । गुरु का योग न होय तो खुद पचक्खाण का पाठ बोलना । एरामणा से कम पचक्खाण में पौषध नहीं हो सकता, उपधानादि मोटे तप की बात जुड़ी है । राइपडिकमण में पचक्खाण ले लिया हो तो यहाँ फिर लेने की आवश्यकता नहीं है । याद कर लेना चाहिये ।

पौषध में लघुशुक्रा ( पेशाब ) करने को जाना पड़े तो कपड़ा बदल कर मातरिया में मात्रा कर के निर्जीव भूमि पर 'अणुजाणह जस्सग्गो' बोल कर परठना और फिर तीन बार 'बोसिरह' कहना । बाद गरम जल से मातरिया और हाथ को धो कर स्थापनाचार्य के पास खमासमण दे कर इरियावहि पडिकम कर 'गमणागमणे' का पाठ कहना ।

**पचक्खाण-पारने की विधि—**

मध्याह्न काल में स्थापनाचार्य या गुरु के सामने उत्कृष्ट-देववदनविधि से देव वांदना । चोविहार उपवास न हो तो 'खमा० इरियावहि०, तस्म उत्तरी०, अन्नत्थ०' एक लोगस्स या चार नवकार का काउस्मग्ग कर, पार कर



कहना । फिर स्वमाममण दे कर ' इच्छाकारेण० चैत्यवदन करुं, इच्छं' कह कर ' जगचिंतामणि०, नमुत्पुण, जावति०, खमा०, जावत०, खमा०, नमोर्द्धति०, उरमग्गहर०, जय-वीयराय०' बोल कर स्वमाममण पूरक आदेश ले कर और नमस्कार गिन कर ' मङ्ग जिणाण ' की सज्जाय कहना । फिर ' इच्छाकारेण० पच्चक्खाण पारवा मुहपत्ति पडिलेहुर्जा ? ' कह के मुहपत्ति पडिलेह कर, मृद्वी भीच कर नीचे का पाठ बोलना ।

“ घुरे उग्गए उपवाम कय्यो तिविहार, पोरिमि, माढ-पोरिसि पुरिमङ्गमुट्टिमहिय पच्चक्खाण कय्युं पाणाहार-पच्चक्खाण फासिय पालिय सोहिय तीरिय किट्टिय आगहिये ज च न आराहिय तम्म मिच्छामि दुक्ख । ”

आयबिल, नीविगइ या एकामणा किया हो तो उपवाम के स्थान पर आयबिल आदि का नाम लेना और पोरिसि आदि में ' पच्चक्खाण कय्युं चोविहार ' कहना । एकासणा आदि अपने घर करने को जाना हो तो कटासणा, मुहपत्ति, चरउला और पुस्तक साथ में ले कर घर जाना । वहाँ एक तरफ शुद्ध जगह पर ऊंचे आमनपे पुस्तक रख कर, उसके सामने डरिया-वहि पडिकम कर, गमणागमणे का पाठ कह कर, कटासण पर बैठ कर, खप पूरता भोजन करना, एठा डालना नहीं, थाली धोकर पी लेना । अगर पूर्व-प्रेरित पुत्रादिक पौष-शाला, उपाश्रय या जहाँ पोसह लिया हो वहाँ पर ही आहार

हैं आप तो इरियावहि करके कटामणा पर बैठ कर, स्वप  
एता भोजन आरोग कर हाथ-मुख की शुद्धि कर लेना ।

पञ्चम्राण-सवरने के विधि—

स्थापनाचार्य के सन्मुख आ कर कटामणा बिछा कर,  
इरियावहि पडिक्रम कर और गमणागमणे रुह कर 'स्वमा०,  
इच्छाकारेण० चैत्यवदन० करु?' कह के 'मकलकुशलमर्ह्यो०'  
का चैत्यवदन बोल कर 'ज किंचि नाम०, नमस्तुण०  
जावति०, स्वमा० जावत०, स्वमा० इच्छाकारेण०, स्तवन भणु?  
इच्छ, नमोऽर्हत्सि०, उवमग्गहर०, जय वीरराय०' कहना ।  
फिर दो घड़ी दिवम बाकी रहने तक तीन चार बार जल-  
पान करना, शेष आहार करने का त्याग करना ।

पोमह में स्थण्डिल (जगल) जाना पड़े तो कपड़ा बदल,  
मृदपात्त केड़ में रख, चम्रला बगल में रख, काल का समय हो  
तो कम्बल ओढ़ और लोटा में गरम जल लेकर गौत्र के बाहर  
निर्गघ भूमि पर 'अणुजाणह जस्सग्गो' कह कर जगल जाना ।  
शौच करके उठत समय मन में तीन बार 'वोसिरइ' कह कर  
उठना । फिर पौषधशाला में 'निसीहि' तीन बार कहते हुए  
आ कर लोटा, हाथ, पैर, गरम जल से धोकर, कपड़ा बदल  
कर स्थापना के सामने इरियावहि पडिक्रम कर 'गमणागमणे'  
का पाठ बोलना । पौषधशाला से जाते 'आवस्सहि' और  
आते समय 'निसीहि' तीन बार अवश्य बोलना ॥

## मंघ्या-पडिलेहण-विधि—

तीमरे प्रहर के बाद म्थापनाचार्य के पाम इरियावहि पडिकम कर 'खमा० इच्छाकारेण०, गमणागमणे आलोउं ? इच्छ, इरियाममिति०, खमा० इच्छाकारेण० पडिलेहण करु ? इच्छ, खमा० इच्छाकारेण०, पोमहसाला प्रमाजुं ? इच्छ' कह कर मुहपत्ति पडिलेहना । फिर चरवला, धोती, उत्तरामण की पडिलेहन करके 'खमा० इच्छकारी भगवन् ! पसाय करी पडिलेहण पडिलेहावोजी' कह कर स्थापना-चार्य या ज्ञानोपकरण की पडिलेहण करना । फिर खमा० इच्छाकारेण० सदिमह भगवन् ! उपधि मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ' कह के मुहपत्ति की पडिलेहण करके 'खमा० इच्छा-कारेण० सज्झाय सदिसाउ ? इच्छ, खमा० इच्छाकारेण० सज्झाय करु ? इच्छ' कह कर, एक नवकार गिन कर उमड़रु आसन से 'मण्ह जिणाण' की सज्झाय बोल कर एक नवकार कहना । फिर 'खमा० इच्छाकारेण० उपधि संदि-साउ ? इच्छ, खमा० इच्छाकारेण० उपधि पडिलेहु ? इच्छ' कह कर बाकी रहे हुए चत्तों की जयणा से पडिलेहण करना ।

खाया हो तो चांदणा टेकर और तिविहार उपवास किया हो तो 'इच्छाकारी भगवन् ! पसाय करी पच्चक्खाण आपो-जी ?' कह कर पाणाहार दिवमचरिम का पच्चक्खाण लेना । चोविहार उपवामवालों को पच्चक्खाण लेने की जरूरत नहीं

है, परन्तु प्रातःकाल में त्रिपिहागेपयाम का पञ्चक्याण लिया हो फिर जलपान न किया हो या न करना हो, तो यहाँ चोविहार उपयाम का पञ्चक्याण ले लेना चाहिये ।

घाट में लडामन की पडिलेहन करके रुचरा निकालना और उमको भेला कर, शोध कर, जीव रहित जमीन के ऊपर निम्बरता हुआ 'अणुजाणह जस्मग्गो' कह कर, जयणा से परठना । घाट म्यापनाचार्य क पाम इरियावहि कर गम-णागमणे आलोचना । फिर उत्कृष्ट द्यवदनविधि से देव वांढना और फिर देवमिय या पाक्षिकादि प्रतिक्रमण करना । उमम मात लाख, अदार पापस्थानक के बदले 'इरियाममिति भापाममिति' और करेमि भत ! मे मयत्र ' जात्र नियम ' के बदले ' जात्र पोमह ' कहना ।

पोमह पारने की विधि—

प्रतिक्रमणक्रिया पूर्ण होन बाद ' खमा०, इरियावहि०, तस्म उत्तरि०, एक लोगस्म या चार नयकार का काउस्मग्ग पार कर 'लोगम्म०' कहना । फिर 'चउकमाय०, नमुत्थुण, जावति० खमा० जावत०, खमा० इच्छाकारेण० स्तवन भणु ? इच्छ, नमोऽर्ह०, उयम्मग्गहर०, जय वीयराय०' कह कर 'खमा० इच्छाकारेण० पोमह पारवा मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ ' मुहपत्ति पडिलेहु कर, 'खमा०

पारु ? 'यथाशक्ति' खमा० इच्छाकारेण० पोसह पार्यु ? 'तहत्ति' चरवला पर जिमना हाथ रख कर, एक नक्कार गिन कर, नीचे का पाठ कहना ।

“ मागरचदो कामो, चदण्डिसो सुदमणो धन्नो ।

जेमि पोसहपडिमा, अखडिया जीणियते वि ॥ १ ॥

धन्ना मलाहणिज्जा, सुलमा आणद-कामटेया य ।

जाम पससड भयन, ददणयत्त महावीरो ॥ २ ॥”

पोसह विधे लीघो, विधे पार्यो, विधि करता जे काई अनिधि हुई होय ते मवि हु मन वचन कायाएँ करी मिच्छामि दुक्कड । पोसहना अदार दोष माहे जे कोई दोष लाग्यो होय ते सवि हु मन वचन कायाएँ करी मिच्छामि दुक्कड । ”

वाट मे 'खमा०, इच्छाकारेण०, सामायिक पारवा मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ' मुहपत्ति पडिलेह कर, खमा०, इच्छाकारेण०, सामायिक पारु ? 'यथाशक्ति' खमा० इच्छाकारेण०, सामायिक पार्यु ? 'तहत्ति' चरवला पर जिमना हाथ रख, एक नक्कार गिनके—

मामाइयवयजुत्तो, जाव मणे होइ नियमसजुत्तो ।

छिन्नइ असुह कम्म, सामाइय जत्तिया वारा ॥ १ ॥

सामाइयम्मि उ कए, समणो इव सावओ हवइ जम्हा ।

एण कारणेण, बहुसो मामाइय कुज्जा ॥ २ ॥

मामायिक विधे लीधु विधे पायुं, विधि करता जे कोई अविधि हुआ होय ते मरि हु मन वचन कायाएँ करी मिच्छामि दुक्कड । दश मनना, दश वचनना, धार कायाना ए पत्नीम दोष माह जे कोई दोष लाग्यो होय ते मरि हु मन वचन कायाएँ करी मिच्छामि दुक्कट । ”

दिवस रा पौषध लिये चात्र यदि रात्रि-पौषध करने का भाव हो जाय तो सध्या के समय पडिलेहन करक, शरिया-वहि पडिकम कर और गमणागमण आलोय कर पोमह लेने की विधि से पोमहटडक उधरना परन्तु ' जात्र दिवस ' के स्थान पर ' जात्र दोषदिवस रत्न ' कहना । प्रात काल में जिनपूजा करके पोमह लेना हो तो सुबह जल्दी उठ कर राह्यपडिकमण करके पडिलेहन कर मामायिक पार, गरम-जल से स्नान कर जिनपूजा करना । फिर पौषधशाला में आ कर ' दैनमिक-पौषधविधि ' से पोमह लेकर मज्जाय का आदेश ले, तीन नयकार गिन कर खमाममण पूर्वक बहुवेल सदमाऊ, बहुवेल करसु ' कह कर उत्कृष्ट दवयदनविधि से देव वादना चाहिये ।

रात्रिक-पौषधविधि—

छ. या चार घड़ी दिन रहते दैनमिक-पौषध में लिखे गये उपकरण, डडासण, चूना डाला हुआ गरम जल का भाजन, बिछाने और ओढ़ने के लिये रुम्बल ले कर पौषध-

“ आगाढे आसन्ने उंचारे पामवणे अणहियासे । आगाढे आसन्ने पासवणे अणहियासे । आगाढे मज्जे उंचारे पासवणे अणहियासे । आगाढे मज्जे पामवणे अणहियासे । आगाढे दूरे उंचारे पासवणे अणहियासे । आगाढे दूरे पामवणे अणहियासे । ”

“ आगाढे आसन्ने उंचारे पामवणे अहियासे । आगाढे आमन्ने पामवणे अहियासे । आगाढे मज्जे उंचारे पामवणे अहियासे । आगाढे मज्जे पामवणे अहियामे । आगाढे दूरे उंचारे पामवणे अहियासे । आगाढे दूरे पामवणे अहियासे । ”

“ अणागाढे आसन्ने उंचारे पामवणे अणहियासे । अणागाढे आसन्ने पासवणे अणहियामे । अणागाढे मज्जे उंचारे पासवणे अणहियासे । अणागाढे मज्जे पामवणे अणहियामे । अणागाढे दूरे उंचार पामवणे अणहियासे । अणागाढे दूरे पासवणे अणहियामे । ”

“ अणागाढे आमन्ने उंचारे पासवणे अहियामे । अणागाढे आसन्ने पासवणे अहियासे । अणागाढे मज्जे उंचारे पासवणे अहियासे । अणागाढे मज्जे पामवणे अहियामे । अणागाढे दूरे उंचारे पासवणे अहियासे । अणागाढे दूरे पामवणे अहियामे । ”

१ गाढ कारण में । २ नजीक में

। ४

छधुनीत । ५ सहन न हो मरे तो । ६

। ८

सहन हो सके तो । ९ गाढ कारण न

गाढे दूरे उच्चारें वामरणे अहियासे । अणागाढे दूरे वामरणे अहियासे । ”

बाद में दैवमिक्र प्रतिक्रमण करना, उमम मात लाख और अदार पापस्थानक की जगह ‘ इच्छाकारेण सदिमह भगवन् ! समणागमणे आलोउ ? ’ कह के ‘ इरियाममिति मापाममिति० ’ कहना । करेमि भते मे मी मर्रज ‘ जाउ नियम ’ के स्थान पर ‘ जाउ पोमह ’ कहना ।

सधारा-पोरिमि भणाने की विधि—

एक प्रहर रात्रि जाय तब मात्रा की शका टाल कर भूमि प्रमार्जन करके कटामणा बिठा कर वापना के सामने ‘ स्वमा इच्छाकारेण० बहुपडिपुन्ना राइयसधारा पोरिमि मणाउणत्थ इरियावहि पडिकमु ? इच्छ ’ कह कर, इरियावहि पडिकम कर ‘ स्वमा० इच्छाकारेण०, बहुपडिपुन्ना पोरिमि राइयसधारण्ठ उउ ? इच्छ, ‘ ठाहशु ’ कह के ‘ चउकमाय०, नमुत्थुण०, जाउति०, स्वमा० जावत०, स्वमा० इच्छाकारेण सदिमह भगवन् ! स्तरन भणु ? इच्छ, नमोऽर्हत्त्०, उरसग्गहर०, जय वीयराय० ’ कह कर ‘ स्वमा०, इच्छाकारेण० सधारापोरिसि

१ पौषध में शयनक पास प्रथम, उससे कुछ दूर द्वितीय, उपाश्रय के बाहर तृतीय और उससे मोहाथ दूर चतुर्थ माडला कहना चाहिये । वर्तमान में उस जगह को पहले तपाम के स्थापना के पास कहने की प्रवृत्ति है ।



भणायवा मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ ' मुहपत्ति पडिलेह कर  
 नवकार पूर्वक तीन वार ' निसीहि निसीहि निमीहि नमो  
 खमाममणण गोयमाइण महामुणीणं ' बोल कर 'रुरेमि भने'  
 बोलना । फिर ' अणुजाणह जिट्ठिजा ' कह कर नीचे मुता-  
 बिक पाठ कहना—

अणुजाणह परमगुरु !, गुरुगुणरयणेहि मडियमरीरा ।  
 चहुपडिपुन्नापोरिमि, राडयमथारए ठामि ॥ १ ॥ अणुजाणह  
 सथार, राहुवहाणेण वामपासेण । कुवहुडिपायपसारण, अतर-  
 तपमज्जए भूमि ॥ २ ॥ सकोइअ सडामा, उअडुते अ काय-  
 पडिलेहा । दवाइ उअओग, ऊयासनिरुभणा लोए ॥ ३ ॥  
 जइ मे हुअ पमाओ, इमस्म देहस्सिमाइ रयणीए । अहाग्मुअ-  
 हिदेह, मध तिरिहण बोमिरिय ॥ ४ ॥ चत्तारि मगल—अरि-  
 हता मगल, मिद्धा मगल, साहू मगल, केअलिपन्नत्तो धम्मो  
 मगल ॥ ५ ॥ चत्तारि लोअुत्तमा—अरिहता लोअुत्तमा, मिद्धा  
 लोअुत्तमा, माहू लोअुत्तमो, केअलिपन्नत्तो धम्मो लोअुत्तमो  
 ॥ ६ ॥ चत्तारि मरण पवज्जामि—अरिहते सरण पअज्जामि, मिद्धे  
 सरणं पअज्जामि, माहू मरणं पवज्जामि, केअलिपन्नत्त धम्म मरण  
 पअज्जामि ॥७॥ पाणाइनायमलियं, चोरिक मेहुण दणिणमुच्छ ।  
 कोह माण माय, लोभ पिअ तहा दोस ॥ ८ ॥ कलह  
 अअमवखाण, पसुअ रइ—अरइ समाउत्त । परपरिनाय माया-  
 मोस मिच्छत्तमह्ठ च ॥ ९ ॥ वोसरिसु इमाइ, मुअखमग्ग-  
 समग्गविग्घभूआइ । दुग्गाइनिअघणाइ, अट्टारमपाअठाणाइ

॥ १० ॥ एगोह नत्थि मे कोई, नाहमन्नस्म कस्तह । एव  
 अदीणमणसो, अप्पाणमणुसामइ ॥ ११ ॥ एगो मे सामओ  
 अप्पा, नाणदसणसज्जुओ । सेमा मे बाहिरा भावा, सबे सजो-  
 गलक्खणा ॥ १२ ॥ सजोगमूला जीवेण, पत्ता दुक्खपरपरा ।  
 तम्हा सजोगसबध, मव्व त्तिविहेण घोसिरिय ॥ १३ ॥ अरि-  
 हतो महदेवो, जानञ्जीव सुमाहुणो गुरुणो । जिणपन्नत्त तत्त,  
 इअ सम्मत्त मए गहिय ॥ १४ ॥ खमियखमाविअ, मह  
 खमह मव्वह जीवनिक्काय । मिद्धह माख आलोयणह, मुज्झह  
 वहर न भाव ॥ १५ ॥ मवे जीया कम्मवम, चउदहराजभमत ।  
 ते मे मव्व खमाविआ, मुज्झ वि तेह गमत ॥ १६ ॥ ज न  
 मणेण वद्ध, ज ज राएण भासिय पाव । ज ज काएण कय,  
 मिच्छामि दूक्कड तम्म ॥ १७ ॥

फिर जमीन पूज कर, करल विछा, ऊपर उत्तरासग विछा  
 कर, मुहपत्ति कटी में खुरस कर और चरगला पडखे रख कर,  
 कपडे बदल के नरकार गिनते हुए मो जाना । रात्रि मे पेशाब  
 या स्थण्डिल की बाधा टालने को जाना पड़े तो कम्बल ओढ  
 कर डहासण से जमीन पूजत हुए दैनमिक्र पोसह मे लिखी  
 विधि क अनुमाऱ जाना और विधि करना ।

सो कर उठने घाद की क्रिया—

पिछली रात्रि मे चार बजे उठ कर, मात्रा की  
 टाल कर, इरियावहि पडिक्रम कर और

काउम्सग कर, राइपडिक्कमण करना । उसमे विशाललोचन-दल के बाट तीन शुई से देव वाद कर 'खमा० इच्छाकारेण०, बहुवेल सदिमाउं ? इच्छ, खमा० इच्छाकारेण०, बहुवेल करइयु ? इच्छ' कह कर भगवानादि उदन कर, अइडाइजेसु० कह कर सिद्धाचल के दउपदन तक विधि करना । फिर पडिलेहण की मुहपत्ति पडिलेह कर चरपला, डडामण, धोती, उत्तरासग की प्रतिलेखना करके 'खमा० इच्छाकारी भगवन् ! पमाय करी पडिलेहण पडिलेहायो ? इच्छ' कह के स्थापना या ज्ञान की पडिलेहण करके ' खमा० इच्छाकारेण० उपधि मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ ' कह कर मुहपत्ति पडिलेह कर बाकी के मर्ग उखों की पडिलेहण करना ।

बाट मे डडासणा से रुचरा निकाल, उस परठ कर, थापना के सामने इरियावहि करके, गमणागमणे का पाठ बोलना । फिर जिनमन्दिर जाकर उत्कृष्ट देवउदनविधि से देव वादना । फिर पौषघशाला मे आकर इरियावहि कर, इरिया-समिति० बोल कर, ' खमा० इच्छाकारेण० सज्जाय सदि-साउ ? इच्छं, खमा० इच्छाकारेण०, सज्जाय करु ? इच्छ ' कह के नउकार पूरक ' मण्ह जिणाण ' सज्जाय बोल कर एक नउकार गिन के पोसह तथा मामायिक पारने की विधि से पोमह-सामायिक पारना ।

आठ प्रहर या चौमठ प्रहर का पौषघ करना हो तो दैव-

मिक पौषघरिधि में पौसह लेने की विधि प्रमाणे पौसह लेना परन्तु करेभि भते मे ' जाव नियम ' के स्थान पर ' जाव अहोरत्त ' अथवा जाव चउसठी पहरपर्यन्त ' रहना । जेप दिनरात्रि की विधि ऊपर मुताबिक ही करना और धर्मध्यान मे परतना चाहिये ।

दिशावकासिक लेने की विधि—

दिशावकासिक करनेवाले को पौसहमाला मे सामायिक योग्य रूपडे पहिन कर, कूटाभणा गिला कर, चरपला मुहपत्ति लेकर, घँठ कर द्रव्य से दिशावकासिक म नियम उपरान्त बम्बाडि न बापर, २ क्षत्र मे नियम उपरान्त भूमि में नहीं चाउ, ३ काल मे दिशावकासिक की टाईम पूरी करने बिना नदी जाउ और ४ भाग मे यथाशक्ति मन को चलविचल नहीं होने दू, मावद्य रचन, व्यापार या अकारण काय संचालन नहीं करु । इस प्रकार अभिग्रह धारण करके इरियावहि पडिक्रम के ' खमा० इच्छाकारण० मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ, कह कर मुहपत्ति पडिलेहना । फिर ' खमा० इच्छाकारेण०, दिमारगामिय सदिसाउ ? इच्छ, खमा० इच्छाकारेण० दिमारगामिय ठाउ ? इच्छ ' एक नबकार गिन के 'इच्छाकारी भगवन् ! पसाय करी दिसारगामियदहक उधरावोजी ? इच्छ ' बोल कर गुरुमुख से उधरे या स्वयं नीचे का पाठ उच्चारण करे—

“ अहन्न भते ! तुम्हाण समीवे दिसावगासिय पच्च-  
 वखामि । दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ । दव्वओणं दिसाव-  
 गासिय । खित्तओण इत्थ ना जन्नत्थ ना । कालओण जाण  
 दिह धा । भाणओण छलेण न छलिज्जामि, जाव सन्निराएण  
 न भविज्जामि । दुग्धि तिग्धिण मणेण प्रायाए ऋएण, न  
 करेमि, न कारवेमि, तम्म भत ! पडिक्कमामि निंदामि  
 गरिहामि अप्पाण वोमिरामि । ”

शब्द म 'खमा० इच्छाकारेण० सामायिक लेना मुहपत्ति  
 पडिलेहु? इच्छ' कह कर, मुहपत्ति पडिलेह कर 'खमा०  
 इच्छाकारेण० सामायिक सद्विमाउ? इच्छ, खमा० इच्छा-  
 कारेण० सामायिक ठाउ? इच्छ' गोल कर, एक नरकार  
 गिन कर सामायिक की करेमि भते उच्चरना, उममें 'जाव  
 नियम' क स्थान पर 'जाव दिमावगासिय' कहना । फिर  
 इगियावहि पडिक्कम कर, 'खमा० इच्छाकारेण त्रेमणे सद्वि-  
 साउ? इच्छ, खमा० इच्छाकारेण० वेसणे ठाउ? इच्छ,  
 खमा० इच्छाकारेण० सज्झाय सद्विमाउ? इच्छ, खमा० इच्छा-

१ गत्रि वा हो तो 'जाव रत्त' अहोरात्रि वा हो तो  
 'जाव अहोत्त' तीन सामायिक हो तो 'जाव तिय सामाइय'  
 छ सामायिक वा हो तो 'जाव उ सामाइय' और दस सामा-  
 यिक वा हो तो 'जाव दस सामाइय' कहना । तीन सामायिक  
 से कम निमावगासिय नहीं हो सकता, अधिक हो सकता है ।

कारेण० मज्झाय करु ? इच्छ ' कह कर तीन नवकार गिन कर ममय पूर्ण न हो वहाँ तक धर्मग्यान में उर्चना ।

दिशावकामिक में पेशाव या स्थण्डिल की बाधा टालने को जाना पड़े तो पौषधविधि में लिगे मृताधिक विधि में जाना और वापस आकर विधि करना । इसी तरह एकामणा, या आपतिल करने को जाना हो तो पौषध में लिगित-विधि प्रमाणे करना । रात्रि का दिशावकामिक करनेवाले को 'मांडला' भी करना और दश सामायिक, आग्ने दिन, अक्षौरात्रि या अधिर टिन का दिशावकामिक करनेवालों को रूपडों की पटिलेहणा और उत्फष्ट देवउदनविधि में देवउदन पौषध-विधि में लिगे मुजब करना चाहिये ।

दिशावकामिक पारने की विधि—

समाममण द कर, हरियात्रहि पडिकम कर और मुहपत्ति पडिलेह कर ' समा० इच्छाकारण० दिशावगासिय पारु ? ' यथाशक्ति ' समा० इच्छाकारेण० दिशावगामिय पारु ? ' तहत्ति ' रह कर, एक नवकार गिनके जीमना हाथ चरला पर रख कर—

“दिशावगासिय विधे लीघो, विधिणं पार्यो, विधि करता जे काई अविधि हुई होय ते सवि हु मन वचन कायाणं तस्म मिच्छामि दुक्कड । ”

बाद मे 'स्वमा० इच्छाकारेण० सामायिक पारवा.मुहपत्ति पडिलेहु ? इच्छ' कह कर मुहपत्ति पडिलेहना । फिर 'स्वमा० इच्छाकारेण०, सामायिक पारु ? ' यथाशक्ति ' स्वमा०, इच्छाकारेण० सामायिक पार्यु ? ' तदत्ति ' कह कर, एक नत्रकार गिन कर, जिमना हाथ चरपला पर रख कर 'मामा-इययजुत्तो०' मे सामायिक पार करके 'अग्निधि आश्रातना हुई होय मिच्छामि दुक्कड ' कहना ।



सामायिक, पोसह और दिसावगासिय म पेशाव करने, स्थडिल और मन्दिर दर्शन करन के लिये जाते आते समय कम्बल ओढ़ने का काल आपाङ्गसुदि पूर्णिमा मे कार्तिकसुदि १४ तक प्रातः और सध्या के समय छ-छ घडी, कार्तिकसुदि पूर्णिमा से फाल्गुनसुदि १४ तक चार-चार घडी और फाल्गुनसुदि पूर्णिमा मे आपाङ्गसुदि १४ तक दो-दो घडी का जानना चाहिये ।

समाप्तमिति ।



## खाचरौद-प्रतिष्ठोत्सव ।

मभा म नेरी करियो, ए राह—

आनन्द रग घरसे खाचरौद के माई ॥ आ० ॥ १० ॥  
 मन्दिर शान्तिनाथ का भारी, चोर्शागली खाचरौद मझारी ।  
 मूर्ति सुदर मन हरनारी, आनन्द मगल दाई ॥ आ० ॥ ११ ॥  
 घाय रिग्यवचद ह बलिहारी, गुरुमन्दिर बनवाई भारी ।  
 गजे द्रविलास नाम किया जारी, नमकमडी के माई ॥ आ० ॥ १२ ॥  
 भावमास ग्यारम उजियारी, चन्द्रगार निपाणु मझारी ।  
 दड कलश अरु ध्वजा मनुहारी, प्रात फाल के माई ॥ आ० ॥ १३ ॥  
 थाठ सोलह मुहूर्त सघनाया, जैसा यतीन्द्रमूरि फरमाया ।  
 विधिमहित सब कार्य कराया, विविध वाजिन वजवा ॥ आ० ॥ १४ ॥  
 अट्टाई महोत्सव सुगदाई, अग रचना जिनभक्ति कराई ।  
 त्रिविध प्रकारी पूजा भणाई, सुदर उटा बनाई ॥ आ० ॥ १५ ॥  
 बेण्ड गाना और वजे मगनाई, चण्डोडा रथयात्रा माई ।  
 अहं की ध्वनि लगाई, जगगुरु शब्द गुजाई ॥ आ० ॥ १६ ॥  
 गुरु आज्ञा मग धार पधारे, बल्लभ कव्याण नीति रग मारे ।  
 लम्बा विहार कष्ट सह भारे, पहुचे उत्सव माहीं ॥ आ० ॥ १७ ॥  
 न्याय चल इन्दौर से आये, दानविजयशा पास ठहराये ।  
 उहाँ मुनि के दर्शन पाये, घाय घडी सुगदाई ॥ आ० ॥ १८ ॥  
 फूल उत्तमथी आदि सारी, नागदा से उत्सव में पधारी ।  
 गभीरथीसा शिव ले लारी, बहिनगर से आई ॥ आ० ॥ १९ ॥  
 महेन्द्रविजयजी रेलविहारी, पडित  के मारी ।  
 और हम सब आण लारी,  ॥ आ० ॥ २० ॥



आथक थाविका थीसघ भाया, चउविध सघ का दर्शन पाया ।  
 धन्य भाग्य यह दिवस सघाया, धरल मंगल वरताई ॥भा०॥११॥  
 लेखिनी से लिखा नहीं जावे, उरसघ में जो मानद आये ।  
 हृपं ने हिरदा उमडा जाये, वहाँ लग करू यदाई ॥भा०॥ १२॥  
 खाचरौद सघ की यलिदारी, गुरुभक्ति शुद्ध श्रद्धा धारी ।  
 श्रीसघ मेया कीनी भारी तन मन धन का लगारै ॥भा०॥ १३॥  
 यती-द्रमडल स्थापा गुरुगड, उगणीमो अठात्तर मारि ।  
 गुरुसप्तमी दिन आनददाइ, निग्याहेडा मारै ॥ आ० ॥ १४ ॥  
 सुरिराजेन्द्र के चौथे पट पर, सुरियतीन्द्र छवि देरू डट कर ।  
 श्रद्धा अटलें कुदन के घट पर, जय बोलो गुरुराई ॥ भा० ॥ १५ ॥

### श्रीशान्तिजिन-स्तवनम् ।

गुधारी भारत को भगवान०, ८ राह—

तिराओ मेवक की भव नाथ ॥ ति० ॥ ८ ॥  
 शान्तिजिनेश्वर हो भवतारक, पारक मोह-गजेन्द्र ।  
 मुन कर आया महिमा तेरी, सेवित चौंसठ इन्द्र ॥ ति० ॥ १ ॥  
 प्रिरत्न मुने देकर स्वामी, अपनाओ जिनराज ।  
 दीनदयालु दान दिग्गओ, मिश्रुक भाया आज ॥ ति० ॥ २ ॥  
 कोईक पुन्योदय से पाये, अचिरादन तार ।  
 मायानटवी मम मन मोहे, आवागमन निवार ॥ ति० ॥ ३ ॥  
 मूरुं नराधम पातिकी मैं हू, आया तुम दरवार ।  
 कुमति पुसग निवारो अय, अरजी धारवार ॥ ति० ॥ ४ ॥  
 राजेन्द्र धने त्रिजग-पूजित, प्यारे पद अरविन्द ।  
 तिमेलनगरे ताहि मुद्रा, यतीन्द्र विद्या घन्ध ॥ ति० ॥ ५ ॥

